ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-3* Issue-1*February- 2018
Innovation The Research Concept

मंचीय कविता के सामाजिक सरोकार

राजेश शर्मा
व्याख्याता,
हिन्दी विभाग,
गर्वमेन्ट पी0 जी0 कालेज,
झालावाड़

सारांश

मंचीय कविता सीधी, सरल भाषा में रचित रचना होती है जो सरलता, आकर्षण, लोक भाषा, आंचलिकता के पुट के कारण तुरन्त हृदयंगम हो जाती है। इसके माध्यम से समाज मे फैली हुई कुरीतियों के प्रति जनता को जागृत किया जा सकता है। इस प्रकार का काव्य मनोरंजन के साथ कब हृदय में उतर जाता है पता ही नही चलता। इस शैली का जागरूक प्रयोग देश के लिए प्रणदायी सिद्ध हो सकता है। इसे दृश्य श्रव्य कोटी का काव्य कहा जा सकता है।

मुख्य शब्द : मंचीय कविता, गेयता और आकर्षण, सहज भाषा, समाज परिवर्तन, मानवीय मूल्य, राष्ट्रनिर्माण।

प्रस्तावना

साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं होता वरन् समाज का पथ प्रदर्शक भी होता है। वह अज्ञान के अन्धकार में मशाल तथा अमावस्या की कालिमा में जुगनू के समान चमकती हुई कभी न बुझने वाली आशा की किरण है। विवेच्य विषय के अनुरूप हम साहित्य को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं– प्रथम साहित्यिक कविता जो अपनी भाषाशैली की भंगिमा में कुछ वैशिष्ट्य लिए होती है, उसका स्तर, उसकी दुरूहता उसके दायरे को सीमित कर देती है। अतः उसको हृदयंगम करने के लिए रस मर्मज्ञ काव्य मनीषी की आवश्यकता होती है। पाठक का बौद्धिक और मानसिक स्तर उच्चकोटि का होता है। ऐसे व्यक्ति के लिए काव्य मनोरंजन, समय को स्तरीय तरीके से व्यतीत करने व व्यक्तित्व विकास का माध्यम और जीवन शैली का अंग तथा कहीं–कहीं तो बौद्धिकता की कसौटी का माध्यम बन जाता है– काव्यशास्त्र विनोदेषु कालोगच्छति... वहीं दूसरी ओर साहित्य कुरीतियों, कुप्रथाओं और दम्भ जैसे दुर्गुणों की धूल झाड़कर मानवीयता के दर्पण को चमका कर उज्ज्वलता प्रदान करने का कार्य करता हैं। परन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि इस साहित्य का उपयोग साहित्य प्रेमी व्यक्तित्व ही कर सकता है। ऐसी कविताओं में राम की शक्ति पूजा, अंधेरे में, ब्रह्म राक्षस, मोचीराम, असाध्यवीणा, जैसी कविताओं का नाम लिया जा सकता है। जिसे समझने के लिए पुनः किसी टीका या समीक्षा की आवश्यकता होती है और ये कविताएं वर्तमान युग में प्रकाशन की प्रतीक्षा करती है और फिर प्रकाशित होकर साहित्य के पन्नों में किसी रस मर्मज्ञ की।

कविता की दूसरी धारा मंचीय कविता की है जो प्रीतिदिन, प्रतिपल समाज के बदलते आयामों से सम्वाद स्थापित करती हुई, उसे झकझोरने का प्रयास करती है। वह समाज के ठहरे हुए स्वरूप से प्रश्न पूछती है व्यंग्य करती है और गुदगुदाती हुई जन–जन की शैली में अपनी बात कहती है, तथा अपनी भावनाओं को करूण स्वर में विनम्रता के साथ निवेदित करती हैं। वहीं आँखें तरेरती सतर्क करती हुई, न मानने पर होने वाले दुष्परिणामों से आगाह भी करती है। ऐसा करने में न कहीं भाषा आड़े आती है और न शिल्प। भाव सहज सरिता सा कल–कल करता प्रवाहित होता जाता है।

चूंकि ये कविता मंच से, सामने उमड़े हुए जन समूह के सामने पढ़ी जाती हैं, अतः गेयता और आकर्षण इसका मुख्य गुण हो जाता है। और सादगी इसका बाना। इसमें क्षेत्रीयता का पुट होता है जो इसे अधिक साहित्यिक न होने पर भी जन–जन के कण्ठ का हार बना देता है। और ये कविता कण्ठ से हृदय में उतर अपना अभीप्सित प्राप्त करने में सफल होने की चेष्टा कर समाज परिवर्तन (युग–परिवर्तन) का प्रयास नहीं तो भी स्वप्न तो देख ही लेती है। इस संदर्भ में हम शिव चरण सेन 'शिवा' की म्हने मत मारे री माई,[1] गीत की बात कर सकते हैं। इस गीत में अजन्मी बेटी की मां से न मारने की गुहार है। जिसे सुनकर श्रोताओं का गला भर आता है, वे इसे भावुक होकर ताली बजाते हुए गाने लगते है और कन्या शिशु की व्यथा को महसूस करते हुए कन्याभ्रूण हत्या न करने का प्रण भी करते ही होंगे। ये गीत गेयता, सहजता सरलता और

ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-3* Issue-1*February- 2018
Innovation The Research Concept

भावुकता में अनुपम होने के कारण जन–जन के कण्ठ का हार बन गया है और बेटी बचाओं जैसे आन्दोलनों का प्राण भी।

अध्ययन की अवधि

2017–18

अध्ययन का उद्देश्य

इस आलेख का मुख्य उद्देश्य साहित्य की शक्ति से समाज को परिचित कराना है। साहित्य परिवर्तन का अमूतपूर्व अस्त्र सिद्ध हो सकता है। यह व्यक्ति के हृदय में उतर आवश्यक परिवर्तन कर मानवीयता को जागृत कर सकता है। यदि इसका सजगता के साथ उपयोग किया जाये तो हम इच्छित परिवर्तन कर अपने राष्ट्र की गरिमा में वृद्धिकर सकते है। सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, रामधारी सिंह दिनकर कबीर, तुलसी, सुभद्रा कुमारी चौहान जैसे कवियों की वाणी के परिप्रेक्ष्य में इसे देख सकते है। आवश्यकता मात्र अपने उद्देश्यानुसार काव्य सृजन की है। हम मंच पर होने वाली छिछली हरकतो को रेखांकित करते हुए इस परिपाटी का विरोध करते है। इसप्रकार मंचीय कविता समाज में सकारात्मक बदलाव का बड़ा साधन सिद्ध हो सकती है। मैथिली शरण गुप्त 'साकेत' में राम के मुख से कहलवाते हैं–

'' मैं यहॉ नहीं संदेश स्वर्ग का लाया,
इस धरती को स्वर्ग बनाने आया।''

वास्तव में 'मंचीय कविता' हमारी धरती को स्वर्ग बनाने का जज्बा रखती है। उसमें वह शक्ति – सामर्थ्य कूट–कूट कर भरी हुई है।

मंचीय कविता अपने स्वतंत्र स्वरूप में तो लिखी ही जाती हैं वहीं समाज में चल रहे आन्दोलनों को लक्ष्य कर सायास भी लिखी जाती है। ये आन्दोलन कभी समाज के द्वारा तो कभी सरकार के द्वारा जन आन्दोलन के रूप में होते रहते हैं। इस प्रकार मंचीय कविता का प्राथमिक एवं मुख्य लक्ष्य समाज ही होता है। समाज में किए जाने वाले परिवर्तन, चाही गई उत्कृष्टताएं सामाजिक सरोकारों के नाम से जानी जाती हैं। ''कविता मानवीय मूल्यों का पक्ष है और किसी भी तरह के अमानवीयकरण के खिलाफ तीव्र प्रतिक्रिया चाहे वह सामाजिक और व्यसावसायिक अनैतिक हो चाहे व्यवस्था की हृदयहीन जकड़। यह चिन्ता एक खास तरह से आज की कविता की जिम्मेदारियों और सम्भावनाओं को बढ़ाती भी है''।[2] यत्र नार्यस्तु पूजन्ते रमन्ते तत्र देवता के सूक्ति वाक्य से सजे इस देश में स्त्रियों के प्रति अपराध बढ़ते चले जा रहे हैं। दामिनी बलात्कार काण्ड' ने इस ओर सम्पूर्ण राष्ट्र का ध्यान आकर्षित किया। यहां तक कि U.N.O. ने इसे भारत की राष्ट्रीय समस्या[3] के रूप में रेखांकित किया हैं। किन्तु स्त्रियों के प्रति अपराध बढते ही चले गये–,[4] ऐसी परिस्थिति को इंगित करते हुए श्री चेतन सिंह चेतन अपने मुक्तक के माध्यम से सम्पूर्ण भारतीय समाज से प्रश्न करते हैं–

''तन्दूर पर क्यों सिक रही हैं लड़कियां?
बाजार में क्यों बि करही हैं लड़कियां?
आदमी होकर कभी सोचा है क्या
बे मौत कैसे मर रही है लड़कियां?[5]

इसी प्रकार हृदयहीन समाज को झकझोरने का प्रयास करता हुआ रघुराज सिंह हाड़ा का गीत 'कोई मी सूता संझा ढालता' है। जिसमें दहेज के दानव की कुप्रथा की ओर संकेत किया गया है जिससे हार कर बेटियाँ आत्महत्या करने पर मजबूर हो जाती हैं और पूरा परिवार अपनी बेबसी पर आंसू बहाने को। बहुत ही हृदय विदारक दृश्य उपस्थित हो उठता है। पुत्री के अन्तस्थल में पिता का सम्मान बसता है अतः वह अपना जीवन उत्सर्ग कर देती है। वहीं एक 'स्त्री' की हत्या पर फैले दंगे पर भी कवि का ध्यान जाता है, जिसमें स्त्री स्त्री न रहकर हिन्दू हो जाती है और अपराधी मुस्लिम! ऊषा बनाम मांस की बोटी रहीमा वल्द महात्मा गांधी,[6] कविता में इस घृणित परिस्थिति को कवि बड़ी ही तल्खी से प्रस्तुत करता है। और प्रश्न उभरता है कि क्या एक समाज की मनोदशा इसी प्रकार की होनी चाहिये? इसी प्रकार बालविवाह का विरोध करता एक गीत 'आखा तीज न जाबा दे रेऽऽ,' है। जिसमें एक स्त्री अपने पति से अपनी बेटी के विवाह का विरोध करती है कि वह अभी बच्ची है, उसकी उम्र खेलने कूदने की है और मैं. उसे स्कूल भेजूंगी, अपने पैरो पर खड़ी करूंगी, उसे अध्यापिका बनाऊंगी। सीधी सादी भाषा में अपनी बात कहता यह गीत ग्रामीण जनों को सीधे–सीधे सन्देश है। इसी प्रकार अशिक्षा भारत की एक भीषण समस्या है। जिसको लक्ष्य कर सरकार की ओर से कई कार्यक्रम चलाये गये और नव चेतना जागृत करने के लिए अनेक गीतों की रचनाएं की गई। इस संदर्भ में कवि परमानन्द भारती के गीतों की चर्चा करना आवश्यक हो जाता है।

कवि परमानन्द भारती के गीत मनोरमता के साथ–साथ बहुत ही हृदयग्रही और मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं। वे अपनी सम्पूर्ण जमीनी हक़ीकत को एक झीने से इंगित में पाठक के गले उतार देते है और वह सोचने को ही मजबूर नहीं होता वरन् सार्थक कदम उठाने को भी प्रतिबद्ध होता हैं 'भारती' प्रत्यक्ष उपदेशात्मक स्वर में बात नहीं करने बल्कि बताते है कि एक छोटी–सी चूक ने कैसे पूरे परिवार को नष्ट कर दिया और पीढ़ियों को गुलाम बनाने पर मजबूर–

''दादा नऽ बाण्या का बही खाता मऽ
हाथ अंगूठों लगायों न होतो
घर न बगड़दो बलद्या न बकता
मई भी हाळी रखायो न होतो
जो पढ़ जातो दादो म्हारो तो
बाण्या न ब्याज बढ़ायो न होतो
दर दर न फरता, भूखा न मरता
यूं घर को खेत परायो न होतो ।''[7]

जनतंत्र 'जनता का तंत्र' है यदि कोई भी नागरिक अपने कर्त्तव्यों का पालन नहीं करता है तो वहीं से जनतंत्र की कड़ी कमजोर पड़ने लगती है। मतदाता जागरूक नहीं होगा तो सक्षम सरकार कैसै बनेगी? योग्य व्यक्ति संसद में कैसे पहुंचेंगे? फिर सफल जनतंत्र और सबल राष्ट्र की कल्पना तो बेमानी ही सिद्ध होगी। गीतकार श्री ओम प्रकाश बैरवा का गीत है मतदाता जागो रे! इसी प्रकार स्वच्छता अभियान, उग्रवाद का विरोध, राष्ट्रीय एकता साम्प्रदायिक सद्भाव, रिश्वत खोरी कालाबाजारी का विरोध, कालेधन की वापसी, मंहगाई का विरोध, स्वच्छ राजनीति, पर्यावरण बचाओ, शुद्ध के प्रति

युद्व कुछ ऐसे मुद्दे हैं जो समय–समय पर जीवन के साथ समाज को मथते रहते हैं तथा कवि उन्हे शब्द देते हुए मंच के माध्यम से समाज को जाग्रत करने का प्रयास। श्री धनीराम समर्थ लिखते है–

''इन्सान हो गया है शैतान की तरह
फैला है भ्रष्टाचार भी भगवान की तरह''

आज हमारे देश में कथनी और करनी का बड़ा अंतर पाया जाता है। यह देश है जहां माँ– बाप में ईश्वर के स्वरूप की देखा जाता है और उनके सानिध्य में स्वर्ग की कल्पना करली जाती है इसी देश में बुजुर्गो की स्थिति नाजुक हो गई है और बुढ़ापा असुरक्षित और भयावह होता चला जा रहा है। इस समस्या को केन्द्र में रख कर लिखी गई एक लम्बी कविता है 'दादी अम्मा' राकेश नैय्यर इस लम्बी कविता के माध्यम से देश में बुजुर्गो के हालात को विस्तार से बताते हैं–

अब वही अम्मा
भगवान से कर रही है प्रार्थना
हे ईश्वर! उठाले जल्दी से जल्दी
अब नहीं सहे जातें /बेटों के तानें
बहुओं के कटाक्ष/पोते– पोतियों की गालियां
कितनी पीड़ा होती हैं जब/बहुएं कहती हैं
साली बुढ़िया मरने का नाम नहीं लेती...[8]

समाज को झकझोरने के प्रयास में कवि कहीं व्यंग्य का आश्रय लेता है तो कहीं सीधे–सीधे आभिधा में ही प्रहार करता है। बात मंचीय कविता की है अतः कभी–कभी कवि गुदगुदाते हुए सीधे–सीधे दिल की बात के माध्यम से राजनीति के खोखलेपन को व्यक्त करता हुआ लिखता है–

ज्यो जीत जाता री भरतार
सखी री दिल्ली मॅ ई/रहता रीऽऽ[9]

वहीं प्रदीप दुबे 'दीप' सम्पूर्ण भारतीय राजनीति सभी नेताओं के चरित्र पर मुहावरे के रूप में तंज कसते हुए कहते हैं–

''देख नतीजे हर गोविन्द
कोई जीते हर गोविन्द
भोग फजीते हर गोविन्द
तेरी विजय नहीं होगी
कोई जीते हर गोविन्द[10]

इसी क्रम में कवि ओ.पी. शर्मा की 'सच कहना' कविता जिसमें कवि संसद एवं शासन व्यवस्था में फेले विद्रूप पर निशाना साधते हैं। इसी प्रकाश शर्मा जी के 'छक्के' है जिनको सुनकर पाठक हतप्रभ रह जाता हैं। आप सीधे–सीधे देश की व्यवस्था को निशाना बनाते हैं–

आरक्षण की आग में नेता डाले तेल–
जनता जाये भाड़ में झेल सके तो झेल......

इसी प्रकार वह नारी की दिखाई जाने वाली तस्वीर पर व्यंग्य करते हुए लिखते है–

टीवी पर दिखला रहे, देखो तो अश्लील
संस्कार की छाती पर कामुकता की कील[11]

इसी सन्दर्भ में व्यंग्यकार श्री राकेश नैय्यर के व्यंग्य– दलबदलुओं से संविधान का नाश्ता, साम्प्रदायिक सौहार्द्र को, के नाम आदि उल्लेखनीय है। वहीं जयसिंह आशावत गांव की दुर्दशा का वर्णन 'गांवां में अब बात पराणी''[12] गीत में करते हैं।

मंचीय कविता चूंकि लोक को समर्पित होती है। उसका मुख्य गुण दूरदराज के अंचल तक कविता को पहुंचाना और कविता के माध्यम से जागृति का शंख फूंकना होता है। अतः उसमें लोक तत्व का समावेश स्वतः ही हो जाता है। लोक भाषा, लोक संस्कृति अर्थात लोक तत्व के आवरण में प्रस्तुत कविता लोक के जेहन में सरलता से उतर जाती है तथा परस्पर संयोग से संस्कृति और कविता दोनों के वैभव में निखार आने लगता है। इस संदर्भ में श्री परमानन्द शर्मा के गीत 'होली' को उद्घृत किया जा सकता है। हमारे देश में होली की ठिठोली प्रसिद्ध है। यह एक ऐसा त्यौहार है जिसमें होली के नाम पर सीधे–सीधे व्यंग्य किया जा सकता है, अपनी बात कही जा सकती है फिर होली की तरंग में प्रसन्नता पूर्वक बुरा न मानने की मनुहार भी– 'बुरा न मानो होली है।' देखिये –

होली छै जी होली छै
नाचै टाबर टोली छै
रंग उड़े गिरनारा माथै
गली–गली बिन्दोली छै[13]

राष्ट्रभक्ति और देश निर्माण मंचीय कविता का प्रिय विषय रहा है। जब कवि मंच से देश भक्ति के गीत गुनगुनाता है तो श्रोता मस्त होकर झूम उठता है। वह अपनी मातृभूमि पर अपना जीवन न्यौछावर करने को सदैव तत्पर रहता है। यह भूमि वास्तव में वीरप्रस्विनी धरा है। आज भी देश भक्ति हमारे अन्तस् का वह केन्द्रीय भाव कहा जा सकता है जिसकी हल्की सी चिन्गारी का भी यदि सदुपयोग किया जाये तो वह सभी मतभेदों को भुलाकर हमें एकता के मजबूत सूत्र में बांधने में सक्षम हो सकता है, यदि हमें विकास करना है, विश्व को प्रतिस्पर्धा में टिके रहना है तो यही वह आधारभूत भाव हो सकता है जिसे उद्दीप्त कर हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। इस संदर्भ में प्रो. के.बी. भारतीय की भॉग छणैगी भायारे, करगिल, परमानन्द भारती की 'निवेदन' शिवचरण सेन शिवा की 'नत रण मऽ' देखी जा सकती है। वहीं श्री रघुराज सिंह हाड़ा की प्रसिद्ध कविता 'शोकसभा' इन सभी भावों से आगे बढ़ कर शहीद के सम्मान में की जाने वाली सभा पर प्रश्न चिह्न लगाती है। जिस देश के गौरव, तिरंगे की शान को बरकार रखने के लिए शहीद प्राणों का उत्सर्ग कर अमर कहाता है, उसी को मृत कहा जाता है और तिरंगे को झुका दिया जाता है– यह कैसा सम्मान है देश का भी और शहीद का भी। यह कविता अपनी वैचारिकता और भावात्मकता में अनूठी है तथा अपनी विशिष्ट बानगी प्रस्तुत करती है। यदि इस दिन को 'गौरव दिवस' के रूप में मनाया जाता तो शहीद का अमरत्व अधिक सार्थक होता है।

भारत उत्सवों का देश है और कविता में उत्सवों का उल्लेख अपनी महत्वपूर्ण भूमिका रखता है। संस्कृति का उत्साह यदि उत्सव है तो भावनाओं का मिठास आनन्द। चाहे बात होली की हो या दिवाली की, तीज की हो या फिर गणगौर की। या हो ईद के सौहार्द्र की। इनका अपना–अपना वैशिष्ट्य है। वहीं ग्रामीण संस्कृति में

ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-3* Issue-1*February- 2018
Innovation The Research Concept

मेले है, मेले की रंगीनियां है और इन सभी की अपनी छटा है। जिसमें बिखरा है– मनोरंजन, और मनोरंजन के साथ प्रत्यक्ष और परोक्ष गहराई से समाया हुआ सूक्ष्म–सा सन्देश। तीज के अवसर पर नव यौवनाओं का झूला झूलना, आपसी हंसी ठिठोली की एक मधुर झांकी प्रस्तुत करता श्री शिवचरण सेन 'शिवा' का गीत 'हीन्दळा'।

हीन्दळा मं गोड़या दैव बाइसा घणी
भाइल्यां पूछै छे, थाको कुण छै धणी।

इसी प्रकार खानपुर में 'ब्राह्माणी' माता के मेले के अवसर पर रचित, शुद्ध हास्य बिखेरता हुआ गीत 'बरमाणी माता अस्यो कांई करम में माड्यो ए छोट क्यों परणग्यों मूं कुवांरो डोलें ऐ।'

वहीं शिवाजी का गीत ऐजी म्हान सासू जी, परमानन्द भारती जयपुर की गणगौर, पूरनमल गहलोत की मिली छै म्हाने ऐसी, परमानन्द भारती का नायों का सम्मेलन गिर्राज आमेठा का 'छीपां' का सम्मेलन आदि।

शृंगार को जीवन का शृंगार कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। बशर्ते शृंगार की कोटि उत्कृष्ट हो। उत्कृष्ट शृंगार जीवन का केन्द्र बिन्दु है, जीवन की सार्थकता और समाज की धुरी है। मानव जीवन की यही माधुरी जब भौंडेपन को छूती है तो विकृति देती है। चाहे वह निजी घरातल हो सामाजिक हो या फिर राष्ट्रीय चरित्र ही क्यों न हो। उत्कृष्ट शृंगार के उदाहरण के रूप में श्री रघुराज सिंह हाड़ा की कविता, चांदनी पील्यां, कबूतरां को जोड़ों, कालचना, श्री शिवचरण सेन शिवा, की गाँव की गौरी आदि। उल्लेखनीय है।

मंचीय कविता में जीवन के सौरभ इस शृंगार पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। और यह भी सत्य है कि सस्ती लोकप्रियता हासिल करने तथा जनता के समक्ष मंच पर बने रहने के लिए मंच पर भोडा प्रदर्शन, छिछले चुटकले बाजी वार्तालाप, छीटांकशी का अजीब दौर कविता के नाम पर प्रस्तुत किया जाता है, जिसमें कवि की छवि तो दूषित होती है। साथ ही सम्पूर्ण मंचीय कविता आक्षेप के घेरे में आजाती है। कविता के सरेआम होने वाले इस चीर हरण के प्रति सर्तक रहने की अत्यन्त आवश्यकता है। कविता का एक उद्देश्य मनोरंजन और धनार्जन भी है किन्तु यह उद्देश्य सकारात्मक होगा तो कविता के कद को बढ़ायेगा ही।

मंचीय कविता का अपना गौरवशाली इतिहास रहा है। बड़े बड़े ख्यातनाम कवियों ने अपनी उत्कृष्ट रचनाएं मंच को समर्पित की है।[14] उनमें हम बहुत ही सम्मान से श्री बालकृष्ण शर्मा नवीन (झूठें पत्ते) रामधारी सिहं दिनकर (क्रान्ति), समर शेष है, सिहांसन ,खाली करो कि जनता आती है कुरूक्षेत्र के अंश सूर्य कान्त त्रिपाठी निराला (बादल राग, जगो फिर एक बार, वीणा वादिनी वर दे। भिखारी, वह तोड़ती पत्थर कुकरमुत्ता, राम की शक्ति पूजा आदि।) बच्चन जी (मधुशाला के छंद) नागार्जुन (अकाल के बाद नेहरू जी की मृत्यु पर) आदि। इसी प्रकार गोपाल दास नीरज इत्यादि का नाम लिये जा सकते है। डॉ. कृष्ण बल्लभ जोशी मंचीय कविता को श्रव्य काव्य कहते हैं।

निष्कर्ष

मंचीय कविता जनता से सीधा सम्वाद है तो कवि द्वारा कविता सुनना एक अविस्मरणीय अनुभव भी। जीवन के इस विशिष्ट दुर्लभ क्षण का यदि हम सावचेत होकर उपयोग करें तो हम समाज के निर्माण में महती भूमिका निबाह सकेंगें। मंचीय कविता को यदि एक विराट चिन्तनशीलता अर्थात एक 'वीजन' के साथ लिखा जाये, हमारे गाँव की, शहर की, पूरे देश की कैसी तस्वीर होनी चाहिए इस सम्पूर्णता के रेखाचित्र (ब्लू प्रिन्ट) के रूप में एक सामूहिक आयोजन के तहत सृजित किया जाये तो हम अपने मनोनुकूल राष्ट्र को गढ़ने में अधिक सफल हो सकेंगे। मंचीय कविता सहज तो होती ही है, किन्तु एक विराट चिन्तन–मनन–मंथन के पुण्य फल के रूप में सहज सृजित भी होतो निश्चय ही हम देश के विकास में अधिक सफल होगें। क्योंकि फिर सभी प्रयास अलग–अलग होते हुए भी एक ही दिशा में गतिमान हो सकेंगे। यही कारण है कि साहित्यकार एक खुले दिल का, विवेकी, मेधावान समाज के प्रति पूर्ण समर्पित, निष्ठावान तपस्वी साधक होता है जो निजी स्वार्थो से परे आदमकद व्यक्तित्व का धनी, महिर्ष– सा विराट होता है। जिसकी तपस्या, पूजा उन्नत समाज की रचना में प्रतिफलित् होती है। चहुँमुखी विकास की यही तस्वीर हमें तराशती हुई सुख समृद्धि और पूर्णता की ओर ले जाएगी। न कि हमें खण्ड–खण्ड करती हुई निराश, खण्डित और असुरक्षित व्यक्तित्व की तरह पेश करेगी। क्योंकि अब मानव शायद समझने लगा है कि सुख 'टोटेलिटी,' अर्थात् सम्पूर्णता और सम्यकता में सबके साथ है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *'म्हने मत मारे री माई' श्री शिवचरण सेन 'शिवा' का अप्रकाशित किन्तु प्रसिद्व गीत*
2. *कविता का जनपद अमानवीयकरण के खिलाफ तीव्र प्रतिक्रिया लेखक कुँवर नारायण सं. अशोक वाजपेयी पृ. 14*
3. *मानावधिकार हाईकमिशनर नवी पिल्लई का बयान*
4. *रेप के पिटर्ल के नाम से राजधानी दिल्ली जानी जाने लगी है '' महिलाओं के लिये अब भी नही बदले हालात दुनियाँ रंग बिरंगी रिपोर्ट मुरली धरन*
5. *मरू गुलशन जुलाई–सितम्बर पृ.14*
6. *रघुराज सिंह हाड़ा (83) राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर पृ. 29*
7. *कवि से वार्ता के दौरान प्राप्त*
8. *अपने होने का अहसास पृ. 141*
9. *शिव चरण सेन शिवा का गीत*
10. *मरू गुलशन पृ. 29 (जुलाई – सितम्बर 14)*
11. *झालावाड़ का साहित्य वैभव ले. गदाधर भटट् प्र. 227*
12. *गाँवां में अब बात पराणी*
    छाछ राबड़ी अर गुड धाणी
    दूध गियां सारो डेरयां मऽ
    सेर होय छाये हो माणी
    (पृ. 62 मरुगुलशन जुलाई–सितम्बर 14)
13. *संभागीय राजस्थान साहित्यकार सम्मेलन, स्मारिका– 2012 पृ. 48*
14. *हिन्दी की मंचीय कविता ले. डा0 रामनरेश पृष्ठ भूमि पृ. 13*
15. *हिन्दी साहित्य शास्त्र ले. कृष्ण बल्लभ जोशी पृ. 59*